# अभिज्ञानशाकुन्तलम् में प्रकृति और मानव का साहचर्य

**अर्पिता त्रिपाठी**

शोधच्छात्रा,
संस्कृत विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

संस्कृत साहित्य में महाकवि कालिदास का अत्यन्त विशिष्ट स्थान है। महाकवि ने अपनी लेखनी के द्वारा महाकाव्य, नाटक एवं गीतिकाव्य का लेखन करके संस्कृत साहित्य के कोष में अक्षय वृद्धि की है। कालिदास विरचित अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक संस्कृत साहित्य का सर्वश्रेष्ठ नाटक है जिसकी प्रशंसा न केवल भारतीय मनीषियों ने की है अपितु विदेशी मनस्वियों ने भी इस नाटक को शिरोधार्य करते हुए इसकी प्रशंसा की है। जर्मन कवि गेटे ने इस नाटक की प्रशंसा करते हुए लिखा कि–

**"Would'st thou the young year's blossoms and the fruits of its decline,
And all by which the soul is charmed enraptured feasted, fed?
Would'st thou the earth and heaven itself in one sole name combine,
I name the, O Shankuntala, and all at once is said."**[1]

भारतीय मनीषियों ने भी **"काव्येषु नाटकं रम्यं, तत्र रम्या शकुन्तला।"**[2] जैसी प्रशस्तिपरक पंक्तियों को लिखकर नाटक की श्रेष्ठता को स्वीकार किया है। महाकवि का यह नाटक घटनाओं की विचित्रता में, प्रकृति और मानव के तादात्म्य सम्बन्ध में, कल्पना की कोमलता में, मानव चरित्र के सूक्ष्म विश्लेषण में, भाषा की सरलता और लालित्य में अत्यन्त श्रेष्ठ है। महाकवि ने मानव और प्रकृति के प्रति उसके प्रेम का जितना सुन्दर वर्णन किया है वैसा वर्णन अन्यत्र दुर्लभ है। यदि महाकवि को प्रकृति का कवि कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। नाटक के परिशीलन के पश्चात् सहज ही यह भाव मन में प्रस्फुटित हो जाते हैं कि महाकवि मानो शकुन्तला के रूप सौन्दर्य को लक्ष्य बनाकर प्रकृति की सुन्दर छटा का वर्णन करना चाह रहे हैं। शृंगार रस प्रधान नाटक के नान्दी पाठ में अष्टमूर्ति शिव की स्तुति के द्वारा महाकवि ने प्रकृति के प्रति अपना अपार स्नेह व्यक्त किया है–

**या सृष्टिः स्रष्टुराद्या वहति विधिहुतं या हविर्या च होत्री,
ये द्वे कालं विधत्तः, श्रुतिविषयगुणा या स्थिता व्याप्य विश्वम्।
यामाहुः सर्वबीजप्रकृतिरिति यया प्राणिनः प्राणवन्तः,**



Scanned with CamScanner

**प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः।।"[3]**

जो परमात्मा की सर्वप्रथम सृष्टि है ऐसी जलरूप मूर्ति, अग्निरूप मूर्ति, यजमानरूप मूर्ति, सूर्य और चन्द्रमारूप मूर्ति, आकाशरूप मूर्ति, पृथिवीरूप मूर्ति, वायुरुप मूर्ति से युक्त भगवान शिव हमारी रक्षा करें। इस प्रकार महाकवि ने शरीर के प्रकृतिमय रूपों की वन्दना की है। वे प्रकृति को मनुष्य जीवन से सर्वथा भिन्न वस्तु नहीं मानते उनके विचार से दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, प्रकृति और पुरुष के इसी सम्बन्ध को साङ्ख्यकारिका में ईश्वरकृष्ण ने पङ्ग्वन्धवत् न्याय का आश्रय लेकर स्पष्ट किया है–

**पुरुषस्य दर्शनार्थं कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य।**
**पङ्ग्वन्धवदुभयोरपि संयोगस्तत्कृतः सर्गः।।[4]**

शिकार के व्यसनी राजा दुष्यन्त मृग का पीछा करते हुए कण्व ऋषि के आश्रम के सीमा प्रान्त में प्रवेश करते हैं उसी समय वैखानस का कथन मृगों की जीवनरक्षा के लिए सहज ही स्फुट हो जाता है–

**"वैखानस : (हस्तमुद्यम्य) राजन् आश्रममृगोऽयं न हन्तव्यो न हन्तव्यः।**
**न खलु न खलु बाणः सन्निपात्योऽयमस्मिन्,**
**मृदूनि मृगशरीरे पुष्पराशाविवाग्निः।**
**क्व बत हरिणकानां जीवितं चातिलोलं**
**क्व च निशितनिपाता वज्रसाराः शरास्ते।।"[5]**

'न हन्तव्यो न हन्तव्यः' इन पदों के प्रयोग के द्वारा वैखानस राजा से धनुष पर चढाये हुये बाण को उतारने का निवेदन करता है। कहाँ तुच्छ हरिणों का अतिचंचल जीवन और कहाँ तीक्ष्ण प्रहार करने वाले बाण। महाकवि ने इस प्रसंग को उद्धृत करके पाठकों के मन में पशु प्रेम की भावना को जाग्रत करने का प्रयास किया है। इस पारिस्थितिकी तन्त्र में जितना महत्त्वपूर्ण स्थान मनुष्यों का है उतना ही महत्त्वपूर्ण स्थान पशुओं का भी है। मनुष्य पशु–पक्षी एवं वृक्ष मिलकर आज भी पारिस्थितिकी तन्त्र के सन्तुलन को बनाये हुए हैं।

महाकवि ने अपने नाटक में भौतिकतावादी स्थानों के वर्णन को न वर्णित कर आश्रम, नदी, पर्वत, कन्दरा, वृक्ष, पशु–पक्षी आदि की झाँकी अपने नाटक में स्थान–स्थान पर प्रस्तुत की है। कहीं आश्रम के मनोहर दृश्य मानव मन को आकर्षित कर रहे हैं, कहीं नदियों की कल–कल ध्वनि श्रवणेन्द्रिय को तृप्त कर रही है, कहीं सुन्दर कन्दराओं में मुनि तप में लीन हैं, कहीं पशु–पक्षी

**समय परिवर्तनशील है। इस परिवर्तनशील समय में व्यक्ति को अनेक प्रकार की परिस्थितियों एवं समस्याओं से गुजरना पड़ता है। जब जीवन में घटित होने वाली घटनायें मानव मन को आह्लादित करती हैं तो मानव सुखी होने का अनुभव करता है किन्तु जब कुछ घटनायें मानव पर गहरा विषादात्मक आघात करती हैं तो वह दुःखी होता है। व्यक्ति को उन परिस्थितियों से घबराना नहीं चाहिए। सूर्य का उदय होना और चन्द्रमा का अस्त होना एक शाश्वत क्रम है।**



Scanned with CamScanner

कलरव कर रहे हैं–

**"नीवाराः शुकगर्भकोटरमुखभ्रष्टास्तरूणामधः**
**प्रस्निग्धाः क्वचिद्इंगुदीफलभिदः सूच्यन्त एवोपलाः............।।"[6]**
**"कुल्याम्भोभिः पवनचपलैः शाखिनो धौतमूला**
**भिन्नो रागः किसलयरुचामाज्यधूमोद्गमेन..............।।"[7]**

शकुन्तों नामक पक्षी के द्वारा पाली गयी कोमलांगी शकुन्तला भी प्रकृति के प्रति अपना अपार स्नेह व्यक्त करती है। वह स्वयं वृक्षों को सींचती है, शकुन्तला वृक्षों से सगे भाई के तुल्य और लताओं से अपनी बहन के तुल्य प्रेम करती है तथा उसी प्रकार मनोयोग से उनकी सेवा में भी तत्पर रहती है–

**"शकुन्तला न केवलं तातनियोग एव। अस्ति मे सोदरस्नेहोऽप्येतेषु।"**
**(इति वृक्षसेचनं रूपयति।)[8]**

शाकुन्तलम् का यह वृत्तान्त मनुष्यों को मानव मन की अहं भावना का परित्याग करने के लिए प्रेरित करता है। मै और मेरा की भावना ने प्रकृति का पर्याप्त दोहन किया है। आज स्वयं के लाभ के लिए वृक्ष काटे जा रहे हैं जिससे वातावरण में नाना प्रकार के प्रदूषण, रोग एवं विसंगतियाँ व्याप्त हो रही हैं। 1973 ई0 में हुआ चिपको आन्दोलन वर्तमान शताब्दी में वृक्षों के प्रति प्रेम के एक नये दृष्टिकोण को समाज के समक्ष प्रस्तुत करता है।

समय परिवर्तनशील है। इस परिवर्तनशील समय में व्यक्ति को अनेक प्रकार की परिस्थितियों एवं समस्याओं से गुजरना पड़ता है। जब जीवन में घटित होने वाली घटनायें मानव मन को आह्लादित करती हैं तो मानव सुखी होने का अनुभव करता है किन्तु जब कुछ घटनायें मानव पर गहरा विषादात्मक आघात करती हैं तो वह दुःखी होता है। व्यक्ति को उन परिस्थितियों से घबराना नहीं चाहिए। सूर्य का उदय होना और चन्द्रमा का अस्त होना एक शाश्वत क्रम है। महाकवि ने सूर्योदय को सुख एवं चन्द्रमा के अस्त होने को दुःख के रूप में वर्णित किया है जो मानव को सुख–दुःख की परिवर्तनशीलता की शिक्षा देते हैं।

**"यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोषधीना=**
**माविष्कृतोऽरुणपुरः सर एकतोऽर्क।**
**तेजोद्वयस्य युगपद्व्यसनोदयाभ्यां**
**लोको नियम्यत इवात्मदशान्तरेषु।।"[9]**

इस प्रकार केवल मनुष्य ही सुख और दुःख का अनुभव नहीं करता है बल्कि महाकवि की दृष्टि में प्रकृति भी नित्यप्रति सुख–दुःख के चक्र का अनुभव करती है। सुख और दुःख एक गाड़ी के दो पहिये हैं यदि सुख है तो दुःख अवश्य होगा। अतः व्यक्ति को सुख–दुःख दोनों में समान रूप से जीवन जीने की कला का ज्ञान होना चाहिए। इन्हीं तथ्यों का उपदेश गीता में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को दिया है–

**"सुखदुःख समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।"[10]**



Scanned with CamScanner

महाकवि कालिदास द्वारा अन्तः प्रकृति एवं बाह्य प्रकृति का सुन्दर समन्वय किया गया है। जो घटनायें मानव मन में घटित हो रही हैं वैसी ही घटनाओं की अनुभूति बाह्य प्रकृति में भी हो रही है। शाकुन्तलम् के चतुर्थ अंक में एक ओर जहाँ पति के वियोग में शकुन्तला की अवस्था दयनीय है तो वहीं दूसरी ओर चन्द्रमा के वियोग में कुमुदिनी की दशा भी शोचनीय है–

**"अन्तर्हिते शशिनि सैव कुमुद्वती मे**
**दृष्टिं न नन्दयति संस्मरणीयशोभा।**
**इष्टप्रवासजनितान्यबलाजनस्य**
**दुःखानि नूनमतिमात्रसुदुःसहानि।।"**[11]

शकुन्तला की बिदायी के अवसर पर आश्रम के सभी व्यक्ति खिन्न हैं। वृक्ष और वनदेवता भी उसके प्रति सहानुभूति प्रकट करते हैं। वे रेशमी वस्त्र, अलक्तक तथा आभूषण देकर शकुन्तला के प्रति अपना घनिष्ठ प्रेम प्रदर्शित करते हैं। प्रकृति के साथ इस प्रकार का भावात्मक सम्बन्ध एवं आदान प्रदान विश्व साहित्य में अन्यत्र दुर्लभ है–

**"क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डु तरुणा मांगल्यमाविष्कृतं**
**निष्ठ्यूतश्चरणोपरागसुभगो लाक्षारस केनचित्।**
**अन्येभ्यो वनदेवताकरतलैरापर्वभागोत्थितैः**
**र्दत्तान्याभरणानि नः किसलयोद्भेदप्रतिद्वन्द्विभिः।।"**[12]

उपरोक्त प्रसंग पर दृष्टिपात् करने के पश्चात् मानव मन में पन्त जी की पंक्तियाँ **"यह धरती कितना देती है"**[13] अनायास ही रेखांकित हो जाती हैं। जहाँ एक ओर वृक्षों ने शकुन्तला के लिए उपहारस्वरूप आभूषण प्रदान कर अपने प्रेम का प्रदर्शन किया है तो वहीं कण्व भी शकुन्तला के वृक्षों के प्रति प्रेम का वर्णन करते हैं कि शकुन्तला बिना वृक्षों को जल पिलाये जल नहीं पीती थी, अलंकारों के प्रिय होने पर भी उनके नये पत्ते नहीं तोड़ती थी, आज वह शकुन्तला पतिगृहगमन कर रही है, अतः आप सब भी अपनी स्वीकृति दें–

**"पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या**
**नादत्ते प्रियमण्डनाऽपि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।**
**आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः**
**सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।।"**[14]

कालिदास के नाटक में वृक्ष, पशु–पक्षी भी एक जीवित प्राणी के तुल्य व्यवहार करते हुए दिखलाये गये हैं। शकुन्तला की बिदायी के अवसर पर कोयल अपने मधुर स्वर का आश्रय लेकर उसको पतिगृहगमन की अनुमति देती है–

**"अनुमतगमना शकुन्तला**
**तरुभिरियं वनवासबन्धुभिः।**
**परभृतविरुतं कलं यथा**
**प्रतिवचनीकृतमेभिरीदृशम्।।"**[15]



Scanned with CamScanner

शकुन्तला के वियोग से उत्पन्न दुःख को न सह सकने के कारण मृगियों ने कुश के ग्रास उगल दिये हैं, मोरों ने नाचना छोड़ दिया है और लतायें अपने पीले पत्तों को डालकर अपने आँसू बहा रही हैं—

**"उद्गलितदर्भकवला मृग्यः परित्यक्तनर्तना मयूराः।**
**अपसृतपाण्डुपत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लताः।।"[16]**

महाकवि ने प्रकृति का दृष्टान्त देकर परोपकारियों के स्वभाव को वर्णित किया है। जिस प्रकार वृक्ष फल आने पर नम्र हो जाते हैं, बादल नये जल से परिपूर्ण होने पर बहुत नीचे लटक आते हैं, सज्जन पुरुष समृद्धि पाकर सुशील हो जाते हैं, उसी प्रकार परोपकारियों का स्वभाव भी है—

**"भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमै—**
**र्नवाम्बुभिर्दूरविलम्बिनो घनाः।**
**अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः**
**स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्।।"[17]**

महाकवि ने शकुन्तला के वियोग में दुष्यन्त और प्रकृति की साम्यावस्था का वर्णन किया है, जहाँ एक ओर दुष्यन्त शोकाकुल हैं तो वहीं दूसरी ओर बसन्त ऋतु आने पर भी आमों में बौर नहीं है, कोयलों का बोलना बन्द है, कुरबक आदि पुष्प नहीं खिल रहे हैं—

**चूतानां चिरनिर्गताऽपि कलिका बध्नाति न स्वं रजः**
**संनद्धं यदपि स्थितं कुरबकं तत् कोरकावस्थया।**
**कण्ठेषु स्खलितं गतेऽपि शिशिरे पुंस्कोकिलानां रुतं**
**शङ्के संहरति स्मरोऽपि चकितस्तूणार्धकृष्टं शरम्।।[18]**

इस प्रकार कालिदास प्रकृति के साथ तादात्म्य का अनुभव करते हैं। वे प्रकृति को सजीव और मानवीय भावनाओं से ओत—प्रोत मानते हैं। मनुष्य के तुल्य वह भी सुख—दुःख का अनुभव करती है और मनुष्य के सुख—दुःख में सहानुभूति प्रकट करती है। अतः मनुष्य और प्रकृति एक दूसरे के पूरक हैं। एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती है।

विस्तार में जाकर दृष्टिपात् करें तो न केवल अभिज्ञानशाकुन्तलम् वरन् कालिदास के सम्पूर्ण काव्य में प्रकृति प्रेम, उसके रमणीय स्वरूप का वर्णन, उसके सहकारी रूप का चित्रण और मनुष्य के साथ उसके गहन साहचर्य का सघन और सरस वर्णन प्राप्त होता है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् में प्रकृति और मानव का इतना सहज सघन साहचर्य दृष्टिगोचर होता है कि अनेक स्थान पर दोनों के बीच अभेद की स्थिति दिखायी देती है। हम जिसे जड़ कहते हैं और जो चेतन की संज्ञा से अभिहित किया जाता है, उनके बीच अन्योन्याश्रित सम्बन्ध के स्पष्ट दर्शन होते हैं। साहित्य की भाषा में इसे भले ही प्रकृति का मानवीकरण कहकर एक काव्य तत्त्व या गुण के रूप में स्वीकार किया जाये, किन्तु आमजन के मानस पटल पर इसका कुछ अलग ही प्रतिबिम्ब अंकित होता है। वृक्षों, लताओं, पक्षियों द्वारा परित्यक्त कन्या शकुन्तला का पालन—पोषण मनोविनोद, श्रृंगार और पारस्परिक सुख—दुख में क्रमशः उल्लास



Scanned with CamScanner

और करुणा की अनुभूति कालिदास के रसिक पाठकों के मनःपटल पर उनकी काव्यकला के जो हृदयग्राही बिम्ब अंकित करती है, उसे विस्मृत किया जाना अत्यन्त कठिन है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् में मानव और प्रकृति का साहचर्य जनित प्रेम मानव मन की उस उदात्त स्थिति को प्रदर्शित करता है जहाँ इस सम्पूर्ण सृष्टि को वह अपने कुटुम्ब के रूप में परिकल्पित करता है। हमारे साहित्य में इसी भाव को **"वसुधैव कुटुम्बकम्"** कहकर भी प्रकट किया गया है। यह कथन अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि संस्कृत के विपुल लालित्यपूर्ण साहित्य मण्डल के बीच कालिदास का काव्य इसलिए भी शीर्षस्थ है कि इनके यहाँ मनुष्य और उसकी सहचरी प्रकृति के बीच ऐसे स्नेहासिक्त सम्बन्ध का वर्णन मिलता है जो अन्यत्र दुर्लभ है। सम्भवतः इसी कारण अभिज्ञानशाकुन्तलम् न केवल संस्कृत नाटक के पाठकों का, बल्कि सम्पूर्ण विश्व साहित्य के सहृदय पाठकवृन्द का कण्ठहार बना हुआ है।

**संदर्भ ग्रन्थ सूची**

1. जर्मन कवि गेटे
2. अज्ञात
3. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— 1/1
4. साङ्ख्यकारिका— 21
5. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— 1/10
6. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— 1/14
7. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— 1/15
8. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— प्रथम अंक, पृष्ठ 42
9. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— 4/2
10. श्रीमद्भगवतगीता— 2/38
11. अभिज्ञानशाकुन्तलम् — 4/3
12. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— 4/5
13. सुमित्रा नन्दन पन्त की कविता, शीर्षक— आः धरती कितना देती है।
14. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— 4/9
15. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— 4/10
16. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— 4/12
17. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— 5/12
18. अभिज्ञानशाकुन्तलम— 6/4



Scanned with CamScanner